संस्कृत साहित्य और मुस्लिम शासक

—श्री भँवरलाल नाहटा

४, जगमोहन मल्लिक लेन, कलकत्ता-७०००७

भारत में राज्यतन्त्र के माध्यम से इस्लाम का विस्तार हुआ और अंग्रेजी शासनकाल में अंग्रेजी की भाँति राज्यभाषा होने के कारण अरबी, फारसी और उर्दू का प्रचार हुआ किन्तु जन-जीवन में सभी प्रान्तों में अपनी मातृ-भाषा ही विशेषतया प्रचलित थी। साहित्यिक भाषाओं में संस्कृत का प्रचार सर्वव्यापी था। लोक भाषाओं का विकास प्राकृत से अपभ्रंश के माध्यम से प्रान्तीय भाषाओं के रूप में होकर निर्माण हुआ था अतः मुसलमानों को भी अपनी मातृभाषा का गौरव था। किवामखानी नियामतखाँ आदि के ग्रन्थों में अपनी भाषा और चौहान वंश का गौरव पद-पद पर परिलक्षित है। अबदुर्रहमान का सन्देश रासक अपने पूर्वजों की भाषा का ज्वलन्त उदाहरण है। उस पर लक्ष्मी निवास ने संस्कृत टीका का निर्माण किया था। यह इस्लाम का साहित्यिक योगदान ही कहा जाएगा। संस्कृत भाषा की भाँति प्राकृत भाषा सजीव थी, उसका पर्याप्त प्रचार था। आज प्राकृत दुरूह लगती है पर मध्यकाल में वह बोलचाल की भाषा के निकट होने से संस्कृत से भी सरल पड़ती थी। यही कारण है कि सुलतान अलाउद्दीन खिलजी के राज्याधिकारी ठक्कुर फेरू ने अपने सभी वैज्ञानिक ग्रन्थों का निर्माण प्राकृत भाषा में किया। यद्यपि उसमें बोलचाल की भाषा के शब्दों को देश्य प्राकृत रूप में प्रयोग करने में कठिनाई नहीं थी पर जब प्राकृत लोक भाषा के विकास और परिवर्तन के कारण दूर पड़ने लगी तो उन्हें समझने के लिए व अर्थ विस्तार के लिए संस्कृत टीकाओं का निर्माण अपरिहार्य हो गया। अतः पर्याप्त मात्रा में उसका अस्तित्व सामने आया। ब्राह्मण वर्ग में वैदिक संस्कृत जो एक तरह की प्राकृत ही थी, जनता से बिल्कुल अलग हो चुकी थी तो गत दो सहस्राब्दियों से संस्कृत ही बहुजनसंमत और जीवन्त समृद्ध भाषा हो गई। राजसभा में विद्वद् गोष्ठियाँ और शास्त्रार्थ आदि संस्कार सम्पन्न लोगों के लिए उच्चस्तरीय माध्यम था। सम्राट् विक्रमादित्य, भोज, पृथ्वीराज, दुर्लभराज, सिद्धराज जयसिंह आदि की परम्परा सभी शासकों में चलती आई थी, भले ही वह किसी भी वर्ग के रहे हों। सोमसुन्दरसूरि को खम्भात में दैफरखान ने वादि गोकुल संकट विरुद दिया था। मुस्लिम शासकों के दरबार में गोष्ठियाँ, शास्त्रार्थ आदि की गौरवपूर्ण परम्परा थी। और इससे साहित्य की अनेक विधाओं को प्रोत्साहन मिलता था। यहाँ हमें इस्लाम धर्म के अनुयायी शासकों के संस्कृत साहित्य के योगदान के सम्बन्ध में किंचित् विवेचन अपेक्षित है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्राट अलाउद्दीन खिलजी

दिल्ली के सुलतान अलाउद्दीन खिलजी के मन्त्रि मंडल में ठक्कुर फेरू चिरकाल रहा था। वह परम जैन ठक्कुर चन्द्र का पुत्र और धाँधिया गोत्रीय श्रीमाल था। उसने अपने ग्रंथों में सुलतान को कलिकाल चक्रवर्ती लिखा है। वह कन्नाणा (महेन्द्रगढ़) निवासी था। उसने सं. १३७२ में सम्राट के रत्नागार के अनुभव से रयणपरीक्खा (रत्न परीक्षा) ग्रन्थ की रचना की जिसका अनुवाद मैंने कई वर्ष पूर्व करके प्रकाशित किया था। उसी वर्ष ठक्कुर फेरू ने वास्तुसार ग्रंथ का निर्माण किया, जिसमें देवालय प्रतिमाओं की अनेक विधाओं के सम्बन्ध में विशद् वर्णन है। पं० भगवानदास जैन ने इसे सानुवाद प्रकाशित किया। इसी वर्ष ठक्कुर फेरू ने ४७४ श्लोकों में ज्योतिषसार की रचना की। गणितसार भी ३११ गाथाओं में रचित है जिसमें क्षेत्रों के माप, मुकाता, राजकीय कर आदि सभी विषय के गणित का विषय प्रतिपादित है। सं. १३७५ में फेरू दिल्ली टकसाल के गवर्नर पद पर नियुक्त था। वहाँ भी इस प्रतिभाशाली विद्वान ने गहरा अनुभव प्राप्त किया और उसके आधार से १४९ श्लोकों में द्रव्य परोक्षा ग्रन्थ का निर्माण किया। इस ग्रन्थ में उस समय प्राप्य चंदेरी, देवगिरि, दिल्ली, मालव, मुलतान टकशालों के बने सिक्कों के अतिरिक्त खुरासान आदि के विदेशी सिक्कों का भी वर्णन है। तत्कालीन प्राप्त सिक्कों में विक्रम, तोमर राजाओं, कांगड़ा के तथा अनेक सिक्कों में कितना प्रतिशत सोना, चाँदी, ताँबा है और तत्कालीन सिक्के के विनिमय का मोल-तोल आदि वर्णित है। धातु शोधक आदि के प्रकार भी लिखे हैं। कहना न होगा कि मुस्लिम शासन के उस समय तक के सभी सिक्कों का वर्णन है। यह ग्रन्थ विश्व साहित्य में अजोड़ है जिसका मेरे अनुवाद का प्रकाशन वैशाली के प्राकृत जैन शास्त्र अहिंसा शोध संस्थान से हुआ है। अलीगढ़ यूनीवर्सिटी के प्रोफेसर एस. आर. शर्मा इसका अंग्रेजी अनुवाद सम्पादन कर रहे हैं तथा रत्न परीक्षा का अंग्रेजी अनुवाद उन्होंने प्रकाशित भी करवा दिया है। द्रव्य परीक्षा के साथ ही ठक्कुर फेरू का धातूत्पत्ति ग्रन्थ (गा० ५७) वैशाली से प्रकाशित है।

ठक्कुर फेरू के अन्य ग्रंथों में युगप्रधान चतुष्पदिका (सं. १३४७) प्रकाशित है परन्तु भू-गर्भशास्त्र अभी तक अप्राप्त है। सं. १४०४ की प्रति का १ पत्र लुप्त है, संभवतः उसी में वह था।

मालवा-मांडवगढ़ के सुलतान

मुस्लिम शासकों के विशिष्ट मंत्रियों में मांडवगढ़ के श्रीमाल सोनगरा वंश के मंडन और धनदराज का नाम स्वर्णाक्षरों में लिखे जाने योग्य है। ये वहाँ के सुलतान के मंत्री थे। समकालीन पं० महेश्वर कृत काव्य मनोहर में इनका परिचय दिया है। मं. झांझण के छः पुत्र थे जो वहाँ के सुलतान के मत्री थे। द्वितीय पुत्र बाहड़ का पुत्र मंडन मांडवगढ़ के सुलतान का मंत्री था। अलपखान—आलमखान होशंग शाह गोरी ने ३ वर्ष राज्य किया था। सं. १४९० में मुहम्मद खिलजी होशंग शाह की खिताब धारण कर गद्दी पर बैठा जिसने सं. १५२५ तक राज्य किया। उसके पुत्र गयासुद्दीन ने सं. १५५६ तक राज्य किया था। मंत्री मंडन और धनदराज एवं उनके ग्रन्थों का परिचय दिया जाता है।

मंत्री मंडन व्याकरण, अलंकार, संगीत तथा अन्य शास्त्रों का महान् पण्डित था। उसने १ सारस्वत मंडन, २ काव्य मंडन, ३ चम्पू मंडन, ४ कादम्बरी मंडन, ५ अलंकार मंडन, ६ चन्द्र विजय, ७ शृंगार मंडन, ८ संगीत मंडन, ९ उपसर्ग मंडन, १० कवि कल्पद्रुम नामक ग्रन्थों का निर्माण किया। इसकी प्रति सं. १५०४ में विनायक दास कायस्थ के हाथ से लिखी हुई पाटण के ज्ञान भण्डार में विद्यमान है।

साध्वीरत्न कुसुमवती अभिनन्दन ग्रन्थ
Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मंत्री मंडन पर बादशाह का बहुत प्रेम था। उसके सत्संग से वह भी संस्कृत साहित्य का बड़ा अनुरागी और रसिक हो गया था। एक दिन सायंकाल विद्वद्गोष्ठी में बादशाह ने मंडन से कहा—मैंने कादम्बरी की बड़ी प्रशंसा सुनी है, इसकी कथा सुनने की इच्छा है किन्तु बड़े ग्रन्थ को सुनने का समय नहीं मिलता। तुम बड़े विद्वान हो, उसे संक्षिप्त रचना कर सुनाओ। तब सुलतान की आज्ञा से मंडन ने चार परिच्छेदों में 'कादम्बरी मंडन' बनाकर सुनाया।

एक बार पूर्णिमा के दिन सायंकाल मंडन पहाड़ के आंगन में बैठा था। साहित्य चर्चा में चन्द्रोदय हो गया। मंडन ने चन्द्र के उदय से लेकर अस्त तक की अलग-अलग दशाओं का वर्णन ललित पद्य में किया। अस्त के समय खिन्न होकर कहा—सूर्य की भाँति भ्रमण करते चन्द्र का भी अधःपात हुआ, सूर्य किरणों से प्रताड़ित होकर चन्द्रमा भाग रहा था, सूर्य ने उसे कान्तिहीन करके समुद्र में गिरा दिया। इससे सूर्य पर क्रुद्ध होकर १४१ पद्यों में 'चन्द्रविजय' की रचना की जिसमें चन्द्रमा के साथ युद्ध कराके हराया। फिर उदयाचल पर उदय होने का वर्णन कर चन्द्र की उत्पत्ति, सूर्य के साथ वैर, चन्द्रमा की विजय और तारों के साथ विहार बतलाया है।

काव्य मंडन में १२ सर्ग और १२५० श्लोकों में कौरव-पांडव की कथा का वर्णन है। चम्पू मंडन में ७ पटल हैं जिनमें भगवान् नेमिनाथ का चरित्र वर्णित है।

मंडन का चचेरा भाई—चाचा देहड़ का पुत्र धनदराज या धनराज भी नामाङ्कित विद्वान था। उसने मंडप दुर्ग (मांडवगढ़) में सं. १४९० में भर्तृहरि शतक की भाँति ही शृंगार धनद, नीति धनद और वैराग्य धनद संज्ञक धनद त्रिशती की रचना की। उसकी प्रशस्ति में मांडव ने बादशाह गौरी आलमशाह को गुजरात के बादशाह का गर्व तोड़ने वाला लिखा है। अपने पिता के लिए उसने—वे सत्पुरुषों में दिनमणि विरुद्धारक एवं खरतर मुनियों से तत्वोपदेश सुनने वाले—लिखा है और अपनी माता का नाम गंगादेवी लिखा है।

मालव का सुलतान गयासुद्दीन बड़ा उदार और साहित्यप्रेमी था। उसने अपने मित्र श्रीमाली मेघ को माफर मलिक का विरुद दिया था। उसके भाई जीवन के पुत्र पुंजराज ने सारस्वत व्याकरण पर टीका लिखी।

माँडवगढ़ के सुलतान मुहम्मद खिलजी के विश्वासपात्र भंडारी ओसवाल संग्रामसिंह ने बुद्धिसागर नामक सर्वमान्य अत्युपयोगी ग्रन्थ की रचना की।

साहित्य प्रेम, धर्म प्रेम और सत्संग के प्रताप से मालव सुलतान गयासुद्दीन उदार हो गया था। उसने राणकपुर जिनालय के निर्माता धरणाशाह के भ्राता रत्नसिंह के पुत्र चालिग के पुत्र सहसा को अपना मित्र बनाया था। तथा मांडवगढ़ के संघपति वेला ने भी तीर्थयात्रा के लिए संघ निकालने का फरमान प्राप्त किया था। देवास के माफर मलिक के मंत्री सं० देवसी ने २४ देवालय व चतुर्विंशति पित्तलमय जिनपट आदि बनवा के प्रतिष्ठित किये थे। संघ यात्रा, सत्र शाला, प्रतिष्ठा आदि के अनेक उदाहरण हैं पर यहाँ लिखना अप्रासंगिक है फिर भी यह साहित्य प्रेम-सत्संग का ही प्रताप था जिससे जीवदया के अनेक फरमान निकले व प्रजा के साथ सहिष्णु वृत्ति प्रोत्साहित रही।

दिल्ली के सुलतान मुहम्मद तुगलक

दिल्ली के तत्कालीन सुलतानों में ये सर्वाधिक उदार सम्राट हुए हैं। खरतरगच्छाचार्य महान प्रभावक श्री जिनप्रभसूरिजी के सम्पर्क में आने पर सुलतान जैन धर्म के प्रति बड़ा श्रद्धालु हो गया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

था। श्री जिनप्रभसूरिजी एक सर्वतोमुखी प्रतिभा-सम्पन्न बहुत बड़े प्रभावक और साहित्यकार थे। सम्राट द्वारा उपाश्रय, मंदिर का निर्माण हुआ, शत्रुञ्जय यात्रा, फरमान पत्रादि से जीवदया के कार्य हुए। इनके सम्बन्ध में महोपाध्याय विनय-सागर जी कृत "शासन प्रभावक आचार्य जिनप्रभ और उनका साहित्य" देखना चाहिए।

मुगल सम्राट अकबर

मुगलवंश का सम्राट अकबर एक महान दयालु शासक था। उसके दरबार में प्रारम्भ से ही धर्म समन्वय और सहिष्णुतापूर्वक शोध की भावना होने से विविध धर्मानुयायी विद्वानों का जमघट रहता था। नागपुरीय तपागच्छ (पायचन्द गच्छ) के वाचक पद्मसुन्दर शाही दरबार में चिरकाल रहे थे। ये बड़े विद्वान थे और इनके द्वारा रचित संस्कृत व भाषा के अनेक ग्रन्थ पाये जाते हैं। बीकानेर की अनूप संस्कृत लायब्रेरी में इनकी रचनाओं में अकबरशाही शृंगार दर्पण उपलब्ध हुआ जो प्रसिद्ध है। इन्होंने शाही सभा में वाराणसी के विद्वान को शास्त्रार्थ में पराजित किया था। इनके ज्ञान भण्डार के महत्वपूर्ण ग्रन्थ सम्राट के पास संरक्षित थे।

सं. १६२५ में खरतरगच्छ के विद्वान वाचक दयाकलश जी के प्रशिष्य वाचक साधुकीर्ति जी आगरा पधारे और षट्पर्वी पौषध के सम्बन्ध में शाही दरबार में तपागच्छीय बुद्धिसागरजी के साथ शास्त्रार्थ हुआ। उसमें अनिरुद्ध, महादेव मिश्र आदि सहस्रों विद्वानों की उपस्थिति में साधुकीर्ति जी ने विजय प्राप्त की। इसका विशद् वर्णन कवि कनमसोमकृत जइत पद वेलि में है जो हमारे ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह में प्रकाशित है। उसमें 'साधुकीर्ति संस्कृत भाखइ, बुद्धिसागर स्युं-स्युं दाखइ तथा साधुकीर्ति संस्कृत बोलइ शब्दों से सम्राट का संस्कृत प्रेम स्पष्ट है।

सं. १६३९ में तपागच्छ नायक श्री हीर विजय सूरि से सम्राट अकबर को उपदेश मिला। अकबर ने दीन-ए-इलाही धर्म स्थापित किया --जिसमें हीर विजय सूरि और भानुचन्द्र गणि को सदस्य बनाया था। यहाँ विविध धर्म वालों के साथ धार्मिक विचारगोष्ठी होती थी। उपर्युक्त पद्मसुन्दर जी के ग्रन्थ संग्रह को सम्राट ने सूरिजी को भेंट किया। उनके निस्पृह रहने से आगरा में ज्ञान भन्डार स्थापित किया गया। आचार्यश्री के उपदेश से सम्राट ने अनेक सर्वजन हितैषी कार्य जैसे गोहत्या बन्दी, जजिया टैक्स हटाना, तीर्थों के फरमान व अमारि फरमान आदि जारी किये।

श्री हीर विजय सूरि जी के गुजरात पधारने पर सं. १६४५ में उनकी आज्ञा से सम्राट के कृपा पात्र शान्तिचन्द्र उपाध्याय रहे। सम्राट उनके पास रस कोश प्रशस्ति प्रतिदिन श्रवण करता, वे शतावधानी थे, सम्राट व अनेक नृपतियों का सद्भाव प्राप्त किया था। उनके जाने के बाद भानुचन्द्र गणि और उनके शिष्य सिद्धिचन्द्र गुरु शिष्य अकबर के पास रहे। भानुचन्द्र जी से सम्राट प्रत्येक रविवार को सूर्य सहस्र नाम संस्कृत में सुनता था। सिद्धिचन्द्र के शतावधान देखने से प्रभावित होकर सम्राट ने उन्हें 'खुशफहम' का खिताब दिया था। इन्होंने कादम्बरी टीका आदि अनेक ग्रन्थों का निर्माण किया था। बदाउनी २, ३३२ में लिखता है कि सम्राट ब्राह्मणों की भाँति पूर्व दिशा की ओर मुँह करके खड़ा होता और आराधना करता था एवं सूर्य सहस्र नामों का भी संस्कृत में उच्चारण करता था।

सं. १६४८ में खरतरगच्छ नायक श्री जिनचन्द्र सूरिजी को सम्राट ने लाहौर बुलाया और उनसे प्रतिदिन ड्योढी महल में धर्मगोष्ठी किया करता था। सूरिजी के साथ ३१ साधु थे जिनमें ७ तो पहले ही वा० महिमराज (जिनसिंह सूरि) के साथ लाहौर आ गये थे। इनमें सूरिजी के प्रशिष्य समय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुन्दर जी भी थे। एक बार सम्राट की विद्वद् सभा में किसी दार्शनिक विद्वान ने जैनागमों के 'एगस्स सुत्तस्स अनन्तो अत्थो' अर्थात् एक सूत्र के अनन्त अर्थ होते हैं वाक्य पर व्यंग्य कसा। उससे मर्माहत होकर कवि समयसुन्दरजी ने जैन शासनसु की रक्षा, प्रभावना और आगम वाक्यों की अक्षुण्णता रखने के लिए सम्राट से कुछ समय मांगकर जैनागमों के कथन को सत्य प्रमाणित करने का प्रस्ताव रखा। कविवर ने 'रा जा नो द दते सौ ख्यं' इन आठ अक्षरों पर आठ लाख अर्थों की संरचना की। इस ग्रन्थ का नाम अर्थ रत्नावली रखा। वस्तुतः इन्होंने दस लाख से भी ऊपर अर्थ किए थे पर छद्मस्थ दोष से पुनरुक्ति आदि परिमार्जनार्थ पूर्त्यर्थ केवल आठ लाख सुरक्षित अर्थों वाली अष्ट लक्षी प्रसिद्ध किया।

सं. १६४९ श्रावण सुदि १३ को सायं को लाहौर नगर के बाहर कश्मीर विजय के हेतु प्रस्थान करके राजश्री रामदास की वाटिका में प्रथम प्रवास किया और वहाँ समस्त राजाओं, सामन्तों और विद्वानों की परिषद में पूज्य आचार्य श्री जिनचन्द्र सूरिजी को शिष्यों सहित आशीर्वाद प्राप्त्यर्थ बुलाया। इस अवसर पर कविवर ने सबके सामने वह ग्रन्थ सुना कर जिनागम की सत्यता प्रमाणित करते हुए कहा कि मेरे जैसा साधारण व्यक्ति भी एक अक्षर का आठ लाख अर्थ कर सकता है तो सर्वज्ञ की वाणी में अनन्त अर्थ क्यों न होंगे ? इस बात से चमत्कृत होकर सभी विद्वानों के सन्मुख सम्राट ने इस ग्रन्थ को प्रमाणित ठहराते हुए अपने हाथ में लेकर कविवर को समर्पित किया और कहा कि इसकी नकलें कराके सर्वत्र प्रचारित किया जाय।

सम्राट के समक्ष खरतरगच्छीय उ० शिवनिधान के गुरु हर्षसार के मिलन और शास्त्रार्थ से कीर्ति प्राप्त करने के तथा जयसोम उपाध्याय के शाही सभा में विद्वान से शास्त्रार्थ में विजय प्राप्त करने का उल्लेख पाया जाता है।

सम्राट के साथ महिमराज वाचक हर्षविशाल साधु और पंचानन महात्मा को लेकर धर्म प्रचार हेतु कठिन पदयात्रा करके गए। मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रादि भी साथ थे। काश्मीर में जीव रक्षा, तालाब के मत्स्यों को अभयदान के फरमान मिले। वापस आने पर सम्राट ने सूरि जी को युगप्रधान पद, महिमराज जी को आचार्य पद, जयसोम व रत्ननिधान को उपाध्याय पद एवं समयसुन्दर व गुण विनय को वाचक पद से अलंकृत कराया। मंत्रीश्वर ने बड़ा भारी उत्सव किया। तीर्थरक्षा खंभात की खाड़ी के जलचर जीवों के रक्षार्थ तथा आषाढ़ी अष्टाह्निका के फरमान निकलवाए।

शाह सलीम के मूल नक्षत्र प्रथम पाद में पुत्री होने पर अष्टोत्तरी स्नात्र कराने में तपागच्छ खरतरगच्छ के साधुओं का निर्देश व मंत्री कर्मचन्द्र की प्रधानता थी। और भी एक बार अष्टोत्तरी स्नात्र कराया जिसका कर्मचन्द्र मंत्री वंश प्रबन्ध में वर्णन है। आरती में उपस्थित होकर दस हजार भेंट करने व भगवान् का स्नात्र-जल शाही अन्तःपुर में ले जाकर शान्ति विधि का वर्णन बड़ा ही प्रभावोत्पादक है। जयसोम उपाध्याय ने इस विधि के ग्रन्थ की रचना की थी।

जिनप्रभ सूरि आदि विद्वानों की अनेक रचनाएँ फारसी भाषा में भी उपलब्ध हैं। समयसुन्दर जी के प्रशिष्य राजसोम का भी फारसी भाषा में स्तोत्र पाया जाता है। इन सब कामों से पारस्परिक प्रेम सौहार्द की वृद्धि हुई।

प्रस्तावित विषय पर यह केवल जैन साहित्यपरक अभिव्यक्ति है। शाही दरबार में हिन्दू समाज के भिन्न-भिन्न समुदायों से सम्बन्धित अनेक विद्वान, ब्राह्मण पण्डितादि भी धार्मिक, साहित्यिक चर्चा में पर्याप्त भाग लेते थे। उनकी मध्यस्थता से शास्त्रार्थादि होते थे अतः संस्कृत साहित्य और मुस्लिम शासकों के विषय में शोधपूर्ण तथ्य प्रकाश में आना आवश्यक है। देश की ऐक्यता में यह भी महत्वपूर्ण कदम होगा।

४, जगमोहन मल्लिक लेन
कलकत्ता—७०००००७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org